भारतीय गाँव

निबंध नंबर : 01

भारतीय एक कृषि प्रधान देश है। प्राचीन काल से ही हमारे देश की अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार कृषि ही रहा है। कृषि पर हमारी निर्भरता के साथ ही यह भी तथ्य हमारे लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है कि देश की सत्तर-प्रतिशत से भी अधिक जनसंख्या गाँवों मे ही निवास करती है। किसी कवि ने सत्य ही लिखा है कि – है अपना हिंदुस्तान कहाँ, यह बसा हमारे गाँवों में। अतः भारतवर्ष के महत्व का वास्तविक मूल्याकंन यहाँ के गाँवों से ही संभव है। उन्हंे किसी भी दृष्टिकोण से पृथक् नहीं किया जा सकता है।

प्राचीन काल मंे सोने की चिड़ियाँ कहलाने वाला देश धन-धान्य से परिपूर्ण था परंतु विदेशियों के निरंतर आक्रमण तथा इसके पश्वात् अंग्रेजों का आधिपत्य होने के उपरान्त भारतीय गाँवांें की दशा अत्यंत दयनीय व सभी के लिए चिंता का विषय बन गई। भारतीय गाँव समय के साथ बेरोजगारी, अज्ञानता तथा पिछड़ेपन पर पर्याय बनकर रह गए।

भारतीय गाँवों की दयनीय व जर्जर अवस्था के अनके कारण हैं। इतिहास की ओर यदि हम दृष्टि डाले तो हम देखते है कि मुगलों के आक्रमण के पश्चात् जब देश में अंग्रेजों का आधिपत्य हुआ, तब गाँवों की दशा अत्यंत चिंतनीय थी। इसका प्रमुख कारण था कि अंग्रेजों ने कभी भी भारत को आत्मसात् नहीं किया। उनका दृष्टिकोण सदैव भारत के प्रति व्यावसायिक ही रहा जिसके फलस्वरूप यहाँ के कुटीर उद्योग तथा कृषि व्यवस्था का हास होता रहा। अंग्रेजों के साथ-साथ जमींदारों व सेठ-साहूकारों के निरंतर शोषण ने भी ग्रामीणों को उबरने का कभी अवसर पद्रान नहीं किया।

देश के गाँवों मे रहने वाले अधिकाशं लोग आज भी रूढ़िवादिता तथा अंधविश्वासों से ग्रसित हैं। पुरानी परंपराओं तथा सामाजिक बंधनों ने उन्हें इस प्रकार जकड़ रखा है कि वे स्वतंत्रता प्राप्ति के पाँच दशकांे के बाद भी विकास की प्रमुख धारा ने स्वयं को पृथक् किए हुए हैं। जातिवाद, भाषावाद जैसी विषमताएँ आज भी उतनी ही प्रबल है जितनी वह पहले हुआ करती थीं। झूठी शान-शौकता अथवा सामाजिक प्रतिष्ठा हेतु कुछ लोग सामथ्र्य से अधिक कर्ज ले लेते हैं। जिसे वे जीवन पर्यत चुकाने में असमर्थ रहते हैं। गरीबी और अशिक्षा के

कारण लोग निरंतर बच्चे पैदा करते रहते है जो उनके जीवन स्तर को तो नीचे की ओर खींचता ही है, साथ ही साथ समुचित भरण-पोषण व शिक्षा के अभाव में बच्चों के भविष्य को भी अंधकारमय बना देता है। गाँवों के लोग अभी भी कई प्रकार की ऐसी समस्याओं से जुड़े हैं जिनका समाधान थोड़े से सामूहिक प्रयासों से संभव है। गाँवों मे ऊर्जाके गैर-परंपरागत साधनों के प्रयोग की काफी संभावनाएँ हैं परंतु गाँवों की निरंतर उपेक्षा के कारण लोग अभी तक उपले जलाकर खाना पका रहे हैं।

विज्ञान व तकनीक के क्षेत्र में वैज्ञानिकों ने अपार सफलता अर्जित की है जिसके फलस्वरूप दुनिया सिमटती हुई प्रतीत होती है। विकास की इस दौड़ में भारतीय गाँव भी अब अछूते नहीं रहे हैं। आज दूर-दराज के गाँवों को भी बिजली-पानी आदि सभी जरूरत की चीजें उपलब्ध कराई जा रही हैं। दूरदर्शन व अन्य संचार माध्यमों के द्वारा ग्रामीण लोगों को उत्तम कृषि, स्वास्थय व उत्तम रहन-सहन संबंधी जानकारी दी जा रही है। गाँवों को सड़क तथा रेलमार्गों द्वारा शहरों से जोड़ने की प्रक्रिया निरंतर जारी है। गाँवों के विकास हेतु सरकार द्वारा अनेक परियोजनाएँ समय-समय पर प्रस्तुत की गई हैं इनमें पंचायती राज व्यवस्था भी प्रमुख है जिससे ग्रामीण दशा मे काफी सुधार हुआ है। सरकार, ग्रामीणजनों तथा समस्त भारतीय नागरिकों का सामूहिक प्रयास अवश्य ही रंग लाएगा और हमारे भारतीय गाँव आदर्श गाँव बन सकेंगे।

निबंध नंबर : 02

भारतीय गाँव

बीसवीं सदी के अन्तिम चरण में पहुँच कर, ज्ञान-विज्ञान के हर क्षेत्र में भरपुर प्रगति कर लेने के बावजूद आज भी भारत को कृषि और गाँवों की सभ्यता-संस्कृति वाली देश माना और कहा जाता है। गुजरे जमाने में अवश्य रहे होंगे भारत के गाँव हमाल सभ्यता-संस्कृति के केन्द्र, हर तरह से उन्नत और विकसित; पर आज का भारतीय गाँव शायद उस सबकी परछाई भी नहीं रह गया है। आज तो उनकी दशा देख कर उनका भीतर पहुँच कर ऐसे लगने लगता है जैसे हम किसी बियाबान और दलदल में पहुँच गए हैं। वहाँ कुछ भी तो ऐसा देखने-सुनने को नहीं मिलता कि जिस पर सचमुच गर्व किया जा सके।

कहा जाता है कि कभी भारत ग्रामों द्वारा ही नियंत्रित हुआ करता था। एक गाँद की दशा देखकर पता चल जाता था कि भारत कितना उन्नत, कितना समृद्ध है अथवा हो सकता है। वहाँ की न्याय-व्यवस्था तक अपनी होती थी। पंचायतों और पंचों में ईश्वर का वास माना जाता था। उन का न्याय, उन का आदेश प्रश्नों से परे हुआ करता था। गाँवों का भीतर-बाहर का वातावरण भी बड़ा साफ-सुथरा और पवित्र रहता था। पंचायत घरों के द्वार अतिथियों को भगवान् के समान मान कर अपने को धन्य माना करते थे। अतिथि-सेवा के लिए हर घर का द्वार खुला रहता था। सभी जातियों, धर्मों, वर्गों के लोग अपने-अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए बड़े प्रेम और भाईचारे के साथ रहा करते थे। कोई किसी पर अविश्वास, अन्याय, अत्याचार आदि कतई नहीं करता था। हर देहाती या ग्रामीण को पवित्रता, प्रेम और भाईचारे, सादगी और भोलेपन का प्रतीक माना जाता था। ग्रामीण या देहाती कहने से ही आँखों के समाने एक देवता स्वरूप आदमी की शक्ल उभरने लगती थी। गाँव के बाहर का वातावरण भी हरा-भरा, साफ-सुथरा हुआ करता था। वन-बागीचे, उनमें उगे पेड़-पौधों पर चहचहाते पक्षी, उस स्वच्छ वातावरण में अपनी परिश्रम पूर्ण कार्य करते हुए लम्बे-तगड़े, स्वस्थ सुन्दर लोग-सभी कुछ बड़ा अच्छा और मन-भावन हुआ करता था। परन्तु आज?

आज का भारतीय गाँव दरिद्रता, दुःख, गन्दगी, मक्खी, मच्छर, अन्याय, अत्याचार आदि का घर बन कर रह गया है। कोई किसी पर विश्वास नहीं करता। कोई किसी को अच्छा खाते-पीते देख और सहन नहीं कर पाता। पंचायतें राजनीतिक दोगलेपन का अखाड़ा बन गई हैं। पंचों में परमेश्वर का नहीं किसी राक्षस का वास होने लगा है। जहाँ कभी सभी की बहू-बेटियाँ आदर और अपनापन पाया करती थीं, आज वहाँ उनकी इज्जत सुरक्षित नहीं रह गई। गरीब बहू-बेटियों की तो कतई नहीं। पहले के भारतीय गाँव में दूध पूत की कसम देना पाप माना जाता था और इस कारण कहा जाता था कि भारत में दूध-घी की नदियाँ बहती है। आज उसी भारत का गाँववासी अपने बच्चों को दूध-दही के लिए बिलखता छोड़कर सारा दूध नगरा-महानगरों में आकर बेच देता है। इसी कारण आज गाँव में दूध-पूत की कसम खाना भी महत्त्वहीन बन कर रह गया है। किसी अतिथि को देख कर नाक भौं सिकोड़ लिए जाते है । पचायतें और पंचायत घर गुण्डा-गर्दी और राजनीति के अड्डे बनकर रह गई है। जिसे बड़े गर्व के साथ कभी 'ग्राम-संस्कति' कहा जाता था आज वह शर्मिन्दगी और जहालत, गन्दगी और घटियापन, आमतौर पर दरिद्रता का पर्याय बन गई है।

भारतीय ग्राम-संस्कृति के चरमरा जाने के कारण ही आज वहाँ का हस्तशिल्पी और कारीगर या तो वहाँ से भाग कर नगरों-महानगरों में झोपड़-पट्टियाँ आबाद कर रहा है या फिर वहाँ रह कर दरिद्रता का कष्ट भोग रहा है। इधर-उधर मजदूरी करके जीने को बाध्य है। नगरों-महानगरों के आस-पास के गाँव 'आधा तीतर आधा बटेर' वाली कहावत चरितार्थ कर रहे हैं। ग्रामीण वे रह नहीं गए, शहरी बन नहीं पाए। सोते और शौच आदि भी जाते हैं तो पैण्ट पहन कर वहीं खेतों-खलिहानों में । दूसरी ओर घर की जमीनें बेंचकर उन्होंने अपने घर आधुनिक सुविधाओं से भर रखे हैं। पर बाहर वही गन्दगी व्याप्त है। मन में मानवीय भावना का स्थान भी शहरी टुचेपन ने ले लिया है। उस पर शहरी राजनीति ने पहुँच कर वहाँ की मानसिकता, मानवता की परिभाषा तक को गन्दगी का मच्छर-मक्खियों सामनभिनाता ढेर बना दिया है। चरागाहें, पंचायती जमीनें तक बेच कर खा गए हैं, नगरों के आस-पास बसे गाँवों के लठैत राजनीति प्रभावित लोग। पशुओं को नहलाने और पानी पिलाने के लिए सुरक्षित जौहड़ (तालाब) तक बिकने से नहीं बच पाए लालची और समर्थ ग्रामीणों से।

इस तरह स्पष्ट है कि आज के शहरों के आस-पास गाँव सब तरह की शहरी गओं के साथ-साथ बुराइयाँ भी पा चुके हैं। जो गाँव शहरी चकाचौंध से दूर बसे उनमें शायद ग्रामीण भोलापन और मानसिकता पवित्रता तो सुरक्षित मिल जाए: पर वहां का जीवन तरह-तरह के अभावों ने अन्य प्रकार से दूषित और दयनीय बना रखा । जहाँ पीने के पानी तक का अभाव हो, बेचारी औरतों का पूरा दिन एक-दो घड़े पानी न में बीत जाता हो। जहाँ लोगों के पास माटी का दीया जलाने तक के लिए तेल उसे खरीदने का दाम न हो, जो संध्या ढलते ही अन्धेरे के समुद्र में डूब जाता हो; उस गाँव को भारतीय सभ्यता-संस्कृति का केन्द्र प्रतिनिधि या गौरव कैसे कहा जा सकता है।

आज का भारतीय गाँव वास्तव में जीवित मनुष्यों का मरघट या तो बन चुका है, या फिर बनने की प्रक्रिया में है। यदि उसे सुधारने की ओर ध्यान न दिया गया, तो उस के अवशेषों तक को बचा पाना संभव न हो पाएगा।